एक अनदेखा सूर्य ग्रहण

डॉ. सुशील जोशी

वाराणसी

22 जुलाई का इन्तज़ार जितनी बेसब्री से किया था, उतनी ही मुस्तैदी से बादलों ने अपना काम दिखाया। भोपाल में पूर्ण सूर्य ग्रहण दिखाई देने वाला था और संभवतः मेरे जीवन में फिर इसे देखने का मौका न आए। इसलिए बेसब्री थोड़ी ज़्यादा थी। मगर हाथ लगी निराशा।

1980 के पूर्ण सूर्य ग्रहण के समय देश में अघोषित कर्फ्यू जैसी स्थिति थी। 2009 में स्थिति काफी अलग थी। सूर्य ग्रहण को लेकर व्यग्रता नहीं उत्सुकता थी। और बात सिर्फ चंद वैज्ञानिकों और जन विज्ञान अभियानों से जुड़े कार्यकर्ताओं की नहीं है। आम लोगों में भी दुश्चिंता कम कौतूहल ज़्यादा नज़र आ रहा था। वैसे अभी भी यह कहना मुश्किल है कि यदि आसमान साफ होता, तो कितने लोग खग्रास का नज़ारा निहारने को घर से बाहर आते।

खैर, जगह-जगह काफी भीड़ जमा थी इस दृश्य के इन्तज़ार में। जैसे बताते हैं कि वाराणसी में जन सैलाब उमड़ पड़ा था। यही हाल बिहार में तारेगना नामक स्थान का भी था। और स्थानों पर भी लोग बड़ी संख्या में घरों से बाहर निकले थे। कोलकाता तारामंडल के देबीप्रसाद दुराई कहते हैं कि "मैंने अपने कुछ छात्रों के साथ यह अद्भुत आकाशीय नज़ारा देखने को पटना के पास तारेगना जाने का निर्णय किया था। पटना के होटल एक दिन पहले ही भर चुके थे। सड़कों पर ग्रहण की बातें थीं और हर तरफ सोलर गॉगल्स नज़र आ रहे थे।...हमने तय किया था कि सुबह जल्दी ही तारेगना पहुंच जाएंगे। सूर्य ग्रहण शुरू होने का समय 5:29 का था और पूर्णता 6:24:40 से 6:28:23 के बीच होनी थी। जब हम (सुबह 4 बजे के करीब) तारेगना बस्ती के करीब पहुंचे तो लोगों का रेला सड़कों पर था। बस्ती के और करीब पहुंचते-पहुंचते यह रेला एक जनसमुद्र में बदल गया।... धरती का नज़ारा आसमान से ज़्यादा रोमांचकारी था। दसियों हज़ार लोग एक नवनिर्मित अस्पताल के सामने के मैदान में जमा थे। अस्पताल की छत तो वैज्ञानिकों, मीडिया कर्मियों और बिहार के मुख्य मंत्री ने घेर ली थी। मैदान के पास रेल्वे लाइन पर भी लोग खड़े थे। मैं अचंभित था, 1980 के सूर्य ग्रहण के अपने अनुभव को याद कर रहा था जब ग्रहण से जुड़े अपशगुन के अंधविश्वास के चलते एक इन्सान भी खुले में नहीं था। और इस बार चाय और खानपान के ठेले बढ़िया कारोबार कर रहे थे और इस अंध विश्वास की बखिया उधेड़ रहे थे कि ग्रहण के दौरान कुछ भी खाना-पीना नहीं चाहिए। देश में विज्ञान को लोकप्रिय करने के प्रयासों की सफलता हमारी आंखों के सामने थी।"

वैसे यूएस के नासा ने कहा था कि सूर्य ग्रहण को देखने का सर्वोत्तम स्थान पटना है। तारेगना की विशेषता यह है कि यह पटना के काफी नज़दीक है और यहीं रहकर आर्यभट ने अपने आकाशीय अवलोकन किए थे। नासा ने ज़रूर मानसून के विश्लेषण के आधार पर कहा होगा कि पटना में आसमान साफ रहने की उम्मीद है। मगर वहां भी वही हुआ जो भोपाल में हुआ।

मैं भोपाल में था। भोपाल में तो 21 जुलाई की रात से ही आशाओं पर बादल घिरने लगे थे। शायद इसलिए भी कई लोगों ने घरों में ही रहना बेहतर समझा - यह सोचकर कि कम से कम टीवी पर तो देख लेंगे। मेरे जैसे कई लोग ज़रूर घर से निकले और अलग-अलग जगहों

पर गए। वैसे चयन करने का कोई आधार या औचित्य नहीं था। फिर भी काफी लोग भोपाल की श्यामला हिल्स स्थित क्षेत्रीय विज्ञान केंद्र पहुंचे। मुझे तो यह उम्मीद थी कि बादल होने के बावजूद यह केंद्र कुछ न कुछ व्यवस्था करेगा कि हम प्रत्यक्ष न सही, टीवी के पर्दे पर तो ग्रहण को देख सकें। क्षेत्रीय विज्ञान केंद्र ने हमसे प्रति व्यक्ति 10 रुपए शुल्क वसूल किया। मुझे लगा कि यह अनुचित था - जब आप चाहते हैं कि अधिक से अधिक लोग आएं और इस नज़ारे का अवलोकन करें तो शायद बेहतर होता कि उस दिन शुल्क माफ कर दिया जाता। और वैसे भी बादलों को देखने के बाद वह शुल्क थोड़ा ज़्यादा ही लग रहा था। और शुल्क किस चीज़ का था पता नहीं, शायद केंद्र की छत तक जाने का शुल्क था यह क्योंकि केंद्र ने कोई व्यवस्था नहीं की थी, एक एलसीडी टीवी तक नहीं लगाया था।

खैर, छाता हाथ में लिए ग्रहण देखने को वहां काफी लोग जमा थे। पांच सौ से तो ज़्यादा ही रहे होगे। जन विज्ञान समूहों के लोग दूरबीन वगैरह लेकर पहुंचे थे, शायद इस उम्मीद में कि हो सकता है ग्रहण के समय बादल छंट जाएंगे। ऐसा कुछ नहीं हुआ, बादलों ने ग्रहण पर ग्रहण लगाया। मगर यह बात ज़रूर कहना चाहिए कि बादल होने के बावजूद हर व्यक्ति ने महसूस किया कि सुबह का जो उजाला पैल चुका था वह अचानक अंधेरे में तबदील हो गया। अंधेरा इतना स्पष्ट था कि आप बता सकते थे कि ग्रहण पूर्ण किस क्षण हुआ था।

वैसे कहते हैं कि जब दिन निकलने के बाद वापिस

वाराणसी

अंधेरा होने लगता है, तो जो पक्षी अपने बसेरों से निकल पड़े थे, वे वापिस लौटने लगते हैं और यह स्पष्ट नज़र आता है। भोपाल के पक्षियों ने ऐसा कुछ नहीं किया। मेरा ख्याल है कि उजाला होकर वापिस अंधेरा होने में इतना कम अंतराल था कि पक्षी अभी बसेरा छोड़ भी नहीं पाए थे कि अंधेरा हो गया। वैसे एक मित्र पर एक पक्षी ने झपट्टा ज़रूर मारा था मगर उसका ग्रहण से कोई सम्बंध था, ऐसा नहीं लगता। बाकी कुछ उल्लेखनीय दिखा नहीं। बाद में टीवी पर देखा कि तारेगना में भी बादल छा गए थे। लगता है कि भारत में वाराणसी और कटनी को छोड़कर कहीं और आसमान खुला नहीं था। बस यही संतोष था कि चलो ग्रहण न दिखा, न सही, बहुप्रतीक्षित बारिश तो हो गई।

ग्रहण को लेकर आम लोगों में उत्साह पहले की अपेक्षा बढ़ा है, यह जानकर बहुत अच्छा लगता है। इससे संकेत मिलता है कि लोगों में ग्रहण के वास्तविक कारण (चंद्रमा का पृथ्वी और सूर्य के बीच आ जाना) के प्रति विश्वास बढ़ रहा है। माना जाना चाहिए कि तार्किक व ठोस तथ्यों पर आधारित व्याख्या पर बढ़ता यह विश्वास जीवन के अन्य क्षेत्रों में भी देर सबेर परिलक्षित होगा। जन विज्ञान समूहों का जोश भी उल्लेखनीय है। जहां "देश में विज्ञान को लोकप्रिय करने के प्रयासों की सफलता" एक महत्वपूर्ण सफलता है वहीं कई अन्य मोर्चों पर ऐसी सफलता क्यों नहीं मिलती इस पर विचार करने की भी ज़रूरत है।

यदि 'अंध विश्वास' के चलते कोई व्यक्ति ग्रहण को न देखे, तो इससे प्रत्यक्ष रूप से उसका या समाज का कोई नुकसान नहीं होता। हां, इतना ज़रूर है कि ग्रहण को देखने का निर्णय सोच प्रक्रिया में बदलाव का द्योतक है। मगर यह बदलाव हमें अन्यत्र क्यों दिखाई नहीं पड़ता जहां पारंपरिक विश्वास के परिणाम समाज के लिए हानिकारक साबित हो रहे हैं। जैसे पुत्र प्रेम के संदर्भ में हम ज़्यादा आगे नहीं बढ़े हैं। पुत्र प्राप्ति के चक्कर में देश में बच्चों का लिंग अनुपात लड़कियों के बहुत विरुद्ध हो गया है। क्या जन विज्ञान आंदोलन की इसमें कोई

भूमिका है?

इसी प्रकार से, आज भी दस्त सम्बंधी रोगों से लाखों बच्चे जान गंवाते हैं। दरअसल हमारे देश में 1 वर्ष से छोटे बच्चों का सबसे जानलेवा रोग दस्त ही है। ओ.आर.एस. की मदद से दस्त का प्रारंभिक प्रबंधन करके कई बच्चों की जान बचाई जा सकती है। इस संदर्भ में हमारी सफलता कितनी है? क्या यह अंध विश्वास जन विज्ञान के दायरे में आता है कि दस्त लगने पर खाना-पीना बंद कर देना चाहिए? यही हाल गर्भवती स्त्रियों के खानपान को लेकर भी है। इतने प्रतिबंध, इतनी पाबंदियां हैं। खास तौर से स्वास्थ्य के मामले में ऐसे कई उदाहरण मिल जाएंगे।

फिर आजकल के अखबारों को उठाकर देखें या टीवी चैनल्स को देखें। हर तरफ ज्योतिष और वास्तु का बोलबाला नज़र आता है। इतनी भविष्यवाणियां, इतने नुस्खे इनके नाम पर परोसे जाते हैं कि गिनती मुश्किल है। यूजीसी ने ज्योतिष को विज्ञान की तरह विश्वविद्यालय में पढ़ाने की अनुमति दे दी है। इसका क्या असर होगा, इसे लेकर कोई पड़ताल नहीं की गई है। क्या यह हमारे द्वारा जांच का विषय नहीं होना चाहिए?

लोग बढ़ती संख्या में ग्रहण देखें, यह बहुत उत्साहजनक बात है। मैं कहना सिर्फ इतना चाहता हूं कि इस सफलता को अन्य क्षेत्रों में भी ले जाने की ज़रूरत है। ***(स्रोत फीचर्स)***

तारेगना में 22 जुलाई सुबह का एक दृश्य